दादा भगवान प्ररूपित

टकराव टालिए

किसी के भी साथ टकराव हो जाए, वह अपनी अज्ञानता की निशानी है।

दादा भगवान कथित

टकराव टालिए

संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : **अजीत सी. पटेल**
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन,
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने, नवरंगपुरा,
अहमदाबाद - 380009, Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77

प्रथम संस्करण : 5000 प्रतियाँ, नवम्बर 1997
रीप्रिन्ट : 127000 प्रतियाँ, जनवरी 2001 से फरवरी 2020
नयी रीप्रिन्ट : 10000 प्रतियाँ, जुलाई 2023

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 20 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट
एच.बी.कापडिया न्यू हाइस्कूल के सामने,
छत्राल-प्रतापपुरा रोड, छत्राल,
ता. कलोल, जि. गांधीनगर-382729, गुजरात
फोन : +91 79 3500 2142

ISBN/eISBN : 978-93-86289-72-8

Printed in India

त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो ऊवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नमः शिवाय ॥ ३ ॥

जय सच्चिदानंद

‘दादा भगवान’ कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन पर बैठे श्री ए.एम.पटेल रूपी देहमंदिर ‘दादा भगवान’ पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। ‘मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?’ इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य को भी प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे ‘अक्रम मार्ग’ कहा। क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना! अक्रम अर्थात् बिना क्रम के, लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को ‘दादा भगवान कौन?’ का रहस्य बताते हुए कहते थे कि “यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे ‘दादा भगवान’ हैं। जो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और ‘यहाँ’ हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। मैं खुद भगवान नहीं हूँ। मेरे भीतर प्रकट हुए दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।”

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) को 1958 में आत्मज्ञान प्रकट हुआ था। उसके बाद 1962 से 1988 तक देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे।

दादाश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरू बहन अमीन (नीरू माँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थी। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरू माँ उसी प्रकार मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपक भाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। वर्तमान में पूज्य नीरू माँ के आशीर्वाद से पूज्य दीपक भाई देश-विदेश में निमित्त भाव से आत्मज्ञान करवा रहे हैं।

इस आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, सभी ज़िम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

संपादकीय

'टकराव टालिए' यह एक ही सूत्र यदि जीवन में सीधा उतर गया, उसका संसार तो सुंदर हो ही जाएगा, साथ ही मोक्ष भी सीधे सामने चलकर आएगा। यह निर्विवाद वाक्य है!

अक्रम विज्ञानी संपूज्य दादाश्री द्वारा दिए गए इस सूत्र को अपनाकर कितने ही लोग पार उतर गए। उनके जीवन सुख-शांतिमय बने और वे मोक्ष के राही बन गए! इसके लिए हर एक को मात्र दृढ़ निश्चय करना है कि 'मुझे किसी से टकराव में नहीं आना है। सामने वाला खूब टकराना चाहे, फिर भी मुझे नहीं टकराना है, कुछ भी करके।' बस, इतना सा जिसका निश्चय होगा, उसे कुदरती रूप से भीतर से ही टकराव टालने की सूझ पड़ने लगेगी!

रात को अंधेरे में कमरे से बाहर निकलना हो और सामने दीवार आ जाए, तब हम क्या करेंगे? दीवार को लात मारकर कहेंगे कि 'तू बीच में कहाँ से आई? खिसक जा, यह मेरा घर है!' वहाँ पर तो कैसे सयाने होकर हाथ से दरवाज़ा टटोलते हुए, ढूँढकर, बाहर निकल जाते हैं। क्यों? क्योंकि वहाँ पर समझ है कि अड़ियलपन करूँगा तो दीवार से सर टकराएगा और फूट जाएगा।

संकरी गली में से राजा जा रहा हो और सामने से दौड़ता हुआ एक साँड आए, तो वहाँ राजा साँड से क्या ऐसा कहेगा कि, 'दूर हट जा, मेरा राज है, मेरी गली है, मुझे रास्ता दे !' वहाँ पर तो साँड क्या कहेगा, 'तू राजा तो मैं महाराजा! आ जा!' अर्थात् वहाँ बड़े से बड़े, राजा के राजा को भी धीरे से खिसक जाना पड़ेगा और चबूतरे पर चढ़ जाना पड़ेगा। क्यों? टकराव टालने के लिए!

इस साधारण सी बात से इतना ही समझकर तय करना है कि जो भी हमसे टकराने आए, वे दीवार और साँड जैसे ही हैं। इसलिए यदि हमें टकराव टालना हो तो समझदारी दिखाकर हट जाना। जहाँ कहीं भी टकराव सामने आए तो उसे टालना। ऐसा करने से जीवन क्लेशरहित होगा और मोक्ष प्राप्त होगा।

डॉ. नीरू बहन अमीन

टकराव टालिए

मत आओ टकराव में!

'किसी के साथ टकराव में मत आना और टकराव टालना।' हमारे इस वाक्य का यदि आराधन करोगे तो अंत में मोक्ष तक पहुँचोगे। तुम्हारी भक्ति और हमारा वचनबल सारा काम कर देगा। तुम्हारी तैयारी होनी चाहिए। यदि कोई हमारे एक ही वाक्य का पालन करेगा तो वह मोक्ष में जाएगा ही। अरे, हमारा एक ही शब्द, ज्यों का त्यों, पूरा का पूरा गले उतार ले, तो भी मोक्ष हाथ में आ जाए ऐसा है। लेकिन उसे 'ज्यों का त्यों' गले उतार लेना।

हमारे एक शब्द का यदि एक दिन भी पालन करे तो ग़ज़ब की शक्ति उत्पन्न होगी! भीतर इतनी सारी शक्तियाँ हैं कि कोई कैसे भी टकराव करने आए, फिर भी उसे टाल सकते हैं। जो जान-बूझकर खाई में गिरने की तैयारी में हैं, क्या उनके साथ टकराने के लिए बैठे रहना है? वह तो कभी भी मोक्ष में नहीं जाएगा, ऊपर से तुम्हें भी अपने साथ बिठाए रखेगा। यह कैसे पुसाएगा? यदि तुम्हें मोक्ष में ही जाना हो तो ऐसों के सामने ज़्यादा अक़्लमंदी मत करना। सभी ओर से, चारों दिशाओं से संभालना, वर्ना तुम्हें इस जंजाल से छूटना होगा तो भी जगत् छूटने नहीं देगा। इसलिए घर्षण किए बगैर 'स्मूदली' (सरलता से) बाहर निकल जाना है। अरे, हम तो यहाँ तक कहते हैं कि यदि तेरी धोती झाड़ी में फँस जाए और तेरी मोक्ष की गाड़ी छूटने

वाली हो तो धोती छुड़वाने के लिए बैठे मत रहना! धोती छोड़कर भाग निकलना। अरे, एक क्षण भी किसी अवस्था में चिपके रहने जैसा नहीं है। तब फिर बाकी सब की तो बात ही क्या करनी? जहाँ तुम चिपके, वहाँ तुम अपने 'स्वरूप' को भूले।

यदि भूल से भी तुम किसी के टकराव में आ गए तो उसका समाधान कर लेना। सहजता से, उस टकराव में से घर्षण की चिंगारियाँ उड़ाए बिना निकल जाना।

ट्रैफिक के लॉ से टले टकराव!

जिस तरह हम रास्ते पर संभलकर चलते हैं न, फिर सामने वाला व्यक्ति चाहे कितना भी बुरा हो और हमसे टकरा जाए और नुकसान करे, वह अलग बात है, लेकिन अपना इरादा नुकसान पहुँचाने का नहीं होना चाहिए। हम उसे नुकसान पहुँचाने जाएँगे तो उससे हमें ही नुकसान होगा। प्रत्येक टकराव में हमेशा दोनों को नुकसान होता है। आप सामने वाले को दुःख पहुँचाओगे तो साथ साथ, उसी क्षण आपको भी दुःख पहुँचे बगैर रहेगा ही नहीं। यह टकराव है, इसलिए मैंने यह उदाहरण दिया है कि मार्ग पर वाहन व्यवहार (ट्रैफिक) का धर्म क्या है कि टकराओगे तो आप मर जाओगे, टकराने में जोखिम है। इसलिए किसी के साथ टकराना नहीं। इसी प्रकार इन व्यवहारिक कार्यों में भी मत टकराना। टकराने में हमेशा जोखिम ही है। और टकराव तो कभी-कभी ही होता है। क्या महीने में दो सौ बार टकराव होता है? महीने में कितनी बार ऐसा होता होगा?

प्रश्नकर्ता : कभी कभार! दो-चार बार!

दादाश्री : हाँ, तो उतना हमें सुधार लेना है! मेरा क्या कहना है कि, हम क्यों बिगाड़ें? किसी भी बात को बिगाड़ना हमें शोभा नहीं देता। सभी लोग ट्रैफिक के लॉ (नियम) के आधार पर चलते हैं, वहाँ

खुद की समझ से कोई नहीं चलता न? लेकिन इसमें अपनी समझ से ही चलते हैं। कोई कानून नहीं? उसमें (ट्रैफिक में) तो कभी भी अड़चन नहीं आती, उस ट्रैफिक का कितना सुंदर प्रबंध है! अब इन नियमों को यदि आप समझकर चलो तो फिर से कोई अड़चन नहीं आएगी। अर्थात् इन नियमों को समझने में भूल है। नियम समझाने वाला समझदार होना चाहिए।

आपने इन ट्रैफिक के नियमों का पालन करने का निश्चय किया होता है, तो कितना सुंदर पालन होता है! उसमें क्यों अहंकार जागृत नहीं होता कि वे भले ही कुछ भी कहें लेकिन हम तो ऐसा ही करेंगे? क्योंकि उन ट्रैफिक के नियमों में वह खुद ही अपनी बुद्धि से इतना अधिक समझ सकता है, स्थूल है इसलिए, कि हाथ कट जाएगा, तुरंत मर जाऊँगा। लेकिन उसी प्रकार इसमें यह मालूम नहीं है कि टकराव करने पर मर जाऊँगा। इसमें बुद्धि नहीं पहुँच सकती। यह सूक्ष्म बात है। इससे सभी सूक्ष्म नुकसान होते हैं।

प्रथम बार प्रकाशमान हुआ यह सूत्र!

सन 1951 में एक भाई को यह एक सूत्र दिया था। मुझसे वह संसार पार करने का रास्ता पूछ रहा था। मैंने उसे कहा था 'टकराव टाल' और उसे इस तरह समझाया था।

हुआ ऐसा कि मैं शास्त्र पढ़ रहा था, तब उसने आकर मुझसे कहा कि, 'दादाजी, मुझे कुछ ज्ञान दीजिए।' वह मेरे यहाँ नौकरी करता था। तब मैंने उससे कहा, 'तुझे क्या ज्ञान दूँ? तू तो सारी दुनिया के साथ लड़-झगड़कर आता है, मार-पीट करके आता है।' रेलवे में भी गड़बड़, मारामारी करता है, वैसे तो पानी की तरह पैसे बहाता था, लेकिन रेलवे में जो नियमानुसार पैसा भरना पड़ता है, वह नहीं भरता था और ऊपर से झगड़े करता था, यह सब मैं जानता था। इसलिए

मैंने उससे कहा कि, 'तुझे सिखाकर क्या करना है? तू तो सब के साथ टकराता है!' तब मुझसे कहता है कि, 'दादाजी, यह ज्ञान जो आप सभी को सिखाते हैं, मुझे भी वह कुछ तो सिखाइए।' मैंने कहा, 'तुझे सिखाकर क्या करना है? तू तो रोज़ गाड़ी में मारपीट, गड़बड़ करके आता है।' सरकार को दस रुपए भरने योग्य सामान हो, फिर भी पैसे भरे बिना लाता है और यों लोगों को बीस रुपये के चाय-पानी पिला देता है, तो वे खुश-खुश हो जाते हैं! इससे दस तो बचते नहीं थे, उल्टे दस ज़्यादा खर्च हो जाते। ऐसा नोबल व्यक्ति!

उसने फिर मुझसे कहा कि, 'आप मुझे कुछ ज्ञान सिखाइए।' मैंने कहा, 'तू तो हररोज़ लड़-झगड़कर आता है। और सुनना मुझे पड़ता है।' उसने मुझसे कहा, 'फिर भी दादा, मुझे कुछ तो ज्ञान दीजिए।' तब मैंने कहा, 'एक वाक्य देता हूँ, यदि पालन करेगा तो।' तब कहने लगा, 'अवश्य पालन करूँगा।' मैंने कहा, 'किसी के भी साथ टकराव में मत आना।' तब उसने पूछा, 'दादाजी, टकराव यानी क्या? मुझे समझाइए दादाजी।'

मैंने कहा कि, 'हम सीधे जा रहे हों और बीच में खंभा आए तो हम हट जाएँगे या खंभे से टकराएँगे?' तब उसने कहा, 'नहीं, टकराने से तो सिर फूट जाएगा।' मैंने पूछा, 'यहाँ सामने से भैंस आ रही हो, तो तू ऐसे घूमकर जाएगा या उससे टकराकर जाएगा?' तब कहा, 'टकराकर जाऊँगा तो मुझे मारेगी, इसलिए ऐसे घूमकर जाना पड़ेगा।' फिर पूछा, 'साँप आ रहा हो तो? बड़ा पत्थर पड़ा हो तो?' तब कहा, 'वहाँ से भी घूमकर ही जाना पड़ेगा।' मैंने पूछा, 'किसे घूमना पड़ेगा?' तब कहा, 'हमें घूमना पड़ेगा।' मैंने पूछा, 'क्यों?' तब कहता है, 'अपने सुख के लिए। हम टकराएँगे तो हमें लगेगी!' मैंने कहा, 'इस दुनिया में कुछ लोग पत्थर जैसे हैं, कुछ लोग भैंस जैसे हैं, कुछ गाय जैसे हैं, कुछ मनुष्य जैसे हैं, कुछ साँप जैसे हैं और

कुछ खंभे जैसे हैं। हर तरह के लोग हैं। अब ऐसा रास्ता निकालना ताकि तू उनके साथ टकराव में न आए।'

यह समझ उसे 1951 में दी थी और आज तक उसके पालन में उसने कोई भी कसर नहीं छोड़ी। उसके बाद वह किसी के साथ टकराव में आया ही नहीं। एक सेठ, जो उसके चाचा लगते थे, वे जान गए कि यह टकराव में नहीं आता है। इसलिए वे जान-बूझकर उसे बार-बार उकसाते रहते थे! वे उसे कितना भी उकसाने की कोशिश करते फिर भी वह बच निकलता था। असर नहीं होने देता था। किसी के भी साथ टकराव में आया ही नहीं, 1951 के बाद।

व्यवहार में टालो टकराव ऐसे!

आप गाड़ी में से उतरे और तुरंत कुलियों को बुलाया, 'एय... इधर आ, इधर आ !' दो-चार कुली दौड़कर आते हैं। 'चल, उठा ले।' सामान उठाने के बाद, यदि बाहर निकलकर शोर मचाओ, झगड़ा करो कि 'स्टेशन मास्टर को बुलाता हूँ। इतने पैसे लेता है? तू ऐसा सब करता है...' अरे, यहाँ पर मत टकराना। वह पच्चीस रुपए कहे तो उसे पटाकर कहना कि 'भाई, वास्तव में दस रुपए होते हैं, लेकिन तू बीस ले, चल।' हम जानते हैं कि फँस गए हैं, इसलिए कम-ज़्यादा देकर निपटारा कर लेना है। वहाँ टकराव नहीं करना चाहिए, वर्ना वह बहुत चिढ़ जाएगा। वह घर से चिढ़कर ही आया होता है। फिर स्टेशन पर झिकझिक करेंगे तो यह तो भैंसे जैसा है, अभी चाकू मार देगा। तैंतीस मार्क्स पर मनुष्य बना, बत्तीस मार्क्स पर भैंसा बनता है।

यदि कोई आदमी लड़ने आए और बम के गोले जैसे शब्द आने लगें, तब आपको समझ लेना चाहिए कि टकराव टालना है। आपके मन पर बिल्कुल असर न हो, फिर भी अचानक कोई असर हो जाए, तब समझना चाहिए कि हम पर सामने वाले के मन का असर पड़ा

है। तब हमें खिसक जाना चाहिए। यह सब टकराव है। इसे जैसे-जैसे समझते जाओगे, वैसे-वैसे टकराव टालते जाओगे। टकराव टालने से मोक्ष होता है।

यह जगत् टकराव ही है, स्पंदन स्वरूप है। इसलिए टकराव टालो। टकराव से यह जगत् निर्मित हुआ है। उसे भगवान ने ऐसा कहा है कि 'बैर से उत्पन्न हुआ है'। हर एक मनुष्य, अरे, जीवमात्र बैर रखता है। हद से ज़्यादा हुआ तो बैर रखे बगैर रहेगा नहीं। फिर चाहे वह साँप हो, बिच्छू हो, बैल हो, भैंसा हो या चाहे जो हो, लेकिन बैर रखेगा। क्योंकि सभी में आत्मा है। आत्मशक्ति सभी में एक समान है। इस *पुद्गल* (अहंकार) की कमज़ोरी की वजह से सहन करना पड़ता है, लेकिन सहन करते हुए वह बैर रखे बगैर नहीं रहता और अगले जन्म में वापस वह उस बैर को वसूल करता है।

कोई व्यक्ति बहुत बोले, लेकिन उसके कैसे भी बोल से हमें टकराव नहीं होना चाहिए। यही धर्म है। हाँ, बोल कैसे भी हों। बोल की क्या ऐसी शर्त होती है कि 'टकराव ही करना है'। ये तो सुबह तक टकराव करें ऐसे लोग हैं और अपनी वजह से सामने वाले को परेशानी हो, ऐसा बोलना सब से बड़ा गुनाह है। बल्कि कोई ऐसा बोल दे फिर भी उसे टाल दे, वही मनुष्य कहलाएगा!

सहन? नहीं, सॉल्यूशन लाओ!

प्रश्नकर्ता : दादा, आपने यह जो टकराव टालने को कहा है, इसका अर्थ ऐसा हुआ न कि 'सहन करना' है?

दादाश्री : टकराव टालने का मतलब सहन करना नहीं है। सहन करोगे तो कितना करोगे? सहन करना और 'स्प्रिंग' को दबाना, वे दोनों एक जैसे हैं। 'दबाई हुई स्प्रिंग कितने दिन रहेगी?' इसलिए सहन करना तो सीखना ही मत। सॉल्यूशन लाना सीखो। अज्ञान दशा

में तो सहन ही करना होता है। बाद में एक दिन 'स्प्रिंग' उछलती है, और सब बिखेर देती है, लेकिन यह तो कुदरत का नियम ही ऐसा है।

दुनिया में किसी के कारण हमें सहन करना पड़े, ऐसा नियम ही नहीं है। किसी के कारण यदि हमें सहन करना पड़े तो, वह अपना ही हिसाब होता है। लेकिन आपको पता नहीं चलता कि यह किस बहीखाते का और कहाँ का माल है, इसलिए हम ऐसा मानते हैं कि 'इसने नया माल देना शुरू किया है'। नया माल कोई देता ही नहीं है, दिया हुआ ही वापस आता है। हमारे ज्ञान में सहन करना है ही नहीं। ज्ञान से समझ लेना कि सामने वाला 'शुद्धात्मा' है। यह जो आया, वह मेरे ही कर्म के उदय से आया है, सामने वाला तो निमित्त है। फिर अपने लिए यह 'ज्ञान' इटसेल्फ ही पज़ल सॉल्व कर देगा।

प्रश्नकर्ता : इसका अर्थ यह हुआ कि मन में समाधान कर लें कि जो माल था, वही वापस आया है?

दादाश्री : वह खुद शुद्धात्मा है और यह उसकी प्रकृति है। यह फल प्रकृति दे रही है। आप शुद्धात्मा हो, वह भी शुद्धात्मा है। अब दोनों आमने-सामने सब हिसाब चुका रहे हैं। इसमें इस प्रकृति के कर्म के उदय से वह कुछ देता है। इसलिए हमने कहा कि यह अपने कर्म का उदय है और सामने वाला निमित्त मात्र है। वह लौटा गया इसलिए आपका हिसाब चुक गया। जहाँ यह 'सॉल्यूशन' हो, वहाँ फिर सहन करने को रहता ही नहीं है न!

ऐसा विवरण नहीं करोगे, तो सहन करने से क्या होगा? एक दिन वह 'स्प्रिंग' उछलेगी । 'स्प्रिंग' उछलते देखी है आपने? मेरी 'स्प्रिंग' बहुत उछलती थी। कई दिनों तक मैं बहुत सहन कर लेता

था और फिर एक दिन उछलते ही सबकुछ अस्त-व्यस्त कर देता था। यह सब अज्ञान दशा में था, वह मेरे ध्यान में है, वह मेरी जागृति में है। इसीलिए तो मैं कहता हूँ न कि सहन करना तो सीखना ही मत। सहन करना तो अज्ञान दशा में होता है। यहाँ तो हमें स्पष्ट समझ लेना है कि इसका परिणाम क्या आएगा? इसका कारण क्या है? बहीखाते में ठीक से देख लेना। कोई भी चीज़ हिसाब से बाहर की नहीं होती।

टकराए, अपनी ही भूल से!

इस दुनिया में जो कोई भी टकराव होता है, वह आपकी ही भूल है, सामने वाले की भूल नहीं है! सामने वाले तो टकराएँगे ही। 'आप क्यों टकराए?' तब कहता है, 'सामने वाला टकराया इसलिए!' तो आप भी अंधे और वह भी अंधा हो गया।

प्रश्नकर्ता : टकराव में टकराव करने से क्या होता है?

दादाश्री : सिर फूट जाएगा! तो फिर अगर टकराव हो जाए, तब हमें क्या समझना है?

प्रश्नकर्ता : अपनी ही गलती है।

दादाश्री : हाँ, और उसे तुरंत एक्सेप्ट कर लेना। टकराव हो जाए तो आपको समझना चाहिए कि 'ऐसा मैंने क्या कह दिया कि यह टकराव हो गया!' खुद की भूल मालूम हो जाएगी तो हल आ जाएगा। फिर पज़ल सॉल्व हो जाएगी। वर्ना जहाँ तक हम ऐसा खोजने जाएँगे कि 'सामने वाले की भूल है' तो कभी भी यह पज़ल सॉल्व नहीं होगी। जब ऐसा मानोगे कि 'अपनी ही भूल है' तभी इस संसार का अंत आएगा। अन्य कोई उपाय नहीं है। अन्य सभी उपाय उलझाने वाले हैं और उपाय करना तो अपने अंदर का छुपा हुआ अहंकार है।

उपाय क्यों खोजते हो? सामने वाला आपकी गलती निकाले तो आपको ऐसा कहना है कि 'मैं तो पहले से ही टेढ़ा हूँ।'

बुद्धि ही संसार में टकराव करवाती है। अरे, एक औरत का सुनकर चलने से भी पतन हो जाता है, टकराव हो जाता है, फिर यह तो बुद्धि बहन है! उसकी सुनेंगे तो कहाँ से कहाँ फिंक जाएँगे। अरे, रात को दो बजे जगाकर बुद्धि बहन उल्टा दिखाती है। पत्नी तो कुछ ही समय साथ रहती है, लेकिन बुद्धि बहन तो निरंतर साथ ही रहती है। यह बुद्धि तो 'डीथ्रोन' (पदभ्रष्ट) करवा दे ऐसी है।

यदि आपको मोक्ष में ही जाना हो, तो बुद्धि की बिल्कुल भी मत सुनना। बुद्धि तो ऐसी है कि ज्ञानी पुरुष का भी उल्टा दिखाए। अरे, जिनके द्वारा तुझे मोक्ष प्राप्त हो सके, ऐसा है, उन्हीं का उल्टा देखा? इससे तो आपका मोक्ष आप से अनंत जन्मों के लिए दूर हो जाएगा।

टकराव ही हमारी अज्ञानता है। अगर किसी के भी साथ टकराव हुआ, तो वह अपनी अज्ञानता की निशानी है। भगवान सच-झूठ देखते ही नहीं। भगवान तो ऐसा ही देखते हैं कि, 'वे कुछ भी बोले मगर कहीं टकराए तो नहीं न?' तब अगर कहे, 'नहीं।' बस, हमें इतना ही चाहिए। अर्थात् भगवान के वहाँ सच-झूठ होता ही नहीं है, वह तो इन लोगों के यहाँ पर है। भगवान के वहाँ तो द्वंद्व ही नहीं होता न!

जो टकराएँ, वे सभी दीवारें!

दीवार से टक्कर हो जाए, तब दीवार की भूल है या अपनी? दीवार से आप न्याय माँगो कि 'खिसक जा, खिसक जा'? और आप कहो कि मैं तो यहीं से जाऊँगा तो?' किसका सिर फूटेगा?

प्रश्नकर्ता : अपना।

दादाश्री : अर्थात् किसे सावधान रहना होगा? उसमें दीवार को क्या? उसमें दोष किसका? जिसे चोट लगी, उसका दोष। अर्थात् दीवार जैसा है यह जगत्।

दीवार से टकरा जाओ तो दीवार के साथ मतभेद होता है क्या? अगर कभी आप दीवार से या दरवाज़े से टकरा गए, तो उस समय दरवाज़े से या दीवार से मतभेद होता है?

प्रश्नकर्ता : दरवाज़ा तो निर्जीव चीज़ है न?

दादाश्री : अर्थात् जीवों के लिए ही आप ऐसा मानते हैं कि यह मुझसे टकराया। इस दुनिया में जो टकराती हैं, वे सभी चीज़ें निर्जीव हैं। जो टकराते हैं, वे जीवंत नहीं होते, जीवंत नहीं टकराते। निर्जीव चीज़ें टकराती हैं। इसलिए आपको तुरंत उसे दीवार जैसी ही समझ लेना है, अर्थात् दखल नहीं करनी है! और कुछ देर बाद ऐसा कहना, 'चलो, चाय पीते हैं।'

यदि एक बच्चा पत्थर मारे और खून निकल आए, तब बच्चे को क्या करोगे? गुस्सा करोगे। और आप जा रहे हों और पहाड़ पर से एक पत्थर गिर जाए, आपको वह लग जाए और खून निकल जाए, तब फिर क्या करोगे? गुस्सा करोगे? नहीं। उसका क्या कारण? वह पत्थर पहाड़ पर से गिरा है। यह पत्थर पहाड़ पर से गिरा, वह किसने किया? और वहाँ वह लड़का पत्थर मारने के बाद शायद पछता रहा हो कि 'मुझसे यह क्या हो गया!'

इसलिए इस दुनिया को समझो। मेरे पास आओगे तो आपको ऐसा कर दूँगा कि चिंता नहीं होगी। संसार में अच्छी तरह से रहो और वाइफ के साथ घूमो आराम से। और बेटे-बेटियों की शादी करो आराम से! फिर वाइफ खुश हो जाएगी और कहेगी, 'कहना पड़ेगा, कैसा समझदार बना दिया मेरे पति को!'

अब, वाइफ का किसी पड़ोसन के साथ झगड़ा हो गया हो और उसका दिमाग़ गरम हो गया हो, तभी आप बाहर से आएँ और वह उग्रता से बात करे, तब आप क्या करोगे? आप भी उग्र हो जाओगे? जब ऐसे संयोग आ जाए तब, वहाँ पर हमें एडजस्ट होकर चलना चाहिए। आज वह किस संयोग से क्रोधित हुई है, किसके साथ क्रोधित हुई है, क्या मालूम? आप पुरुष हो, मतभेद मत होने देना। वह मतभेद डाले तो मना लेना। मतभेद अर्थात् टकराव!

साइन्स, समझने जैसा!

प्रश्नकर्ता : हमें क्लेश नहीं करना हो, लेकिन अगर सामने से आकर झगड़ने लगे, तब क्या करें?

दादाश्री : अगर दीवार के साथ लड़े तो कितने समय तक लड़ सकेगा? कभी यदि इस दीवार से सिर टकरा जाए, तो आप उसके साथ क्या करोगे? सिर टकराया, यानी आपकी दीवार से लड़ाई हो गई, अब क्या दीवार को मारोगे? इसी प्रकार ये जो बहुत क्लेश करवाते हैं, वे सभी दीवारें हैं! इसमें सामने वाले को क्या देखना, आपको अपने आप समझ लेना है कि ये दीवारों जैसे हैं, फिर कोई तकलीफ़ नहीं रहेगी।

प्रश्नकर्ता : हम मौन रहें तो सामने वाले पर उल्टा असर होता है कि 'इन्हीं का दोष है' फिर वह ज़्यादा क्लेश करता है।

दादाश्री : यह तो आपने मान लिया है कि 'मैं मौन रहा, इसलिए ऐसा हुआ।' रात को कोई आदमी उठा और बाथरूम जाते समय अंधेरे में दीवार से टकरा गया, तो क्या वहाँ पर वह इसलिए टकरा गई कि आप मौन रहे?

मौन रहो या बोलो, उसे स्पर्श ही नहीं करता, कुछ लेना-देना

नहीं है। ऐसा कुछ नहीं है कि हमारे मौन रहने से सामने वाले पर असर होता है और ऐसा भी नहीं है कि हमारे बोलने से असर होता है। 'ओन्ली साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स' (मात्र वैज्ञानिक सांयोगिक प्रमाण) हैं। किसी की इतनी भी सत्ता नहीं है। बिल्कुल सत्ताविहीन जगत्, उसमें कोई क्या कर सकता है? यदि इस दीवार के पास सत्ता होती, तो सामने वाले के पास भी सत्ता होती। आपके पास इस दीवार को डाँटने की सत्ता है? ऐसा ही सामने वाले के लिए है। और उसके निमित्त से जो टकराव है, वह तो छोड़ेगा नहीं, उससे बच नहीं सकते। व्यर्थ शोर मचाने का क्या मतलब? जबकि उसके हाथ में सत्ता ही नहीं है। इसलिए आप भी दीवार जैसे बन जाओ न! आप बीवी को डाँटते रहते हो, लेकिन उसके अंदर जो भगवान बैठे हैं, वे नोट करते हैं कि यह मुझे डाँट रहा है। और यदि वह आपको डाँटे, तब आप दीवार जैसे बन जाओ तो आपके भीतर बैठे हुए भगवान आपको 'हेल्प' करेंगे।

अतः दीवार तभी टकराती है जब हमारी भूल हो। उसमें दीवार का कसूर नहीं है। तब लोग मुझसे पूछते हैं कि, 'क्या ये सभी लोग दीवार हैं?' तब मैं कहता हूँ कि, 'हाँ, लोग भी दीवार ही हैं।' यह मैं 'देखकर' बता रहा हूँ, यह कोई गप्प नहीं है।

किसी के साथ मतभेद होना और दीवार से टकराना, ये दोनों बातें एक समान हैं। इन दोनों में भेद नहीं है। दीवार से जो टकराता है, वह नहीं दिखाई देने की वजह से टकराता है और जो मतभेद होता है, वह भी नहीं दिखने की वजह से होता है। आगे का उसे दिखाई नहीं देता, आगे का उसे सॉल्यूशन नहीं मिलता, इसलिए मतभेद होता है। ये जो क्रोध-मान-माया-लोभ वगैरह करते हैं, वे भी नहीं दिखाई देने की वजह से ही करते हैं! तो ऐसे बात को समझना चाहिए न! जिसे चोट लगी, उसी का दोष है न! दीवार का कोई दोष है?

तो इस संसार में सभी दीवारें ही हैं। दीवार टकराए, तब आप उसके साथ खरी-खोटी करने नहीं जाते न? ऐसे लड़ने की झंझट में आप नहीं पड़ते न कि 'मेरी बात सही है?' वैसे ही ये सभी दीवार की स्थिति में ही हैं। उससे अपनी बात को सही मनवाने की ज़रूरत ही नहीं है।

आप ऐसा समझ लो कि जो टकराते हैं, वे दीवारें ही हैं। फिर दरवाज़ा कहाँ है, उसे ढूँढो तो अंधेरे में दरवाज़ा मिल जाएगा। यों हाथों से टटोलते-टटोलते जाओ तो दरवाज़ा मिलता है या नहीं मिलता? और फिर वहाँ से निकल जाओ। टकराना नहीं है इस नियम का पालन करना चाहिए कि 'मुझे किसी से टकराव में नहीं आना है।'

जीवन ऐसे जीएँ!

यह तो, जीवन जीना ही नहीं आता। शादी करना भी नहीं आया। बड़ी मुश्किल से शादी हुई! बाप बनना नहीं आता, और यों ही बाप बन गया। अब जीवन इस तरह जीना चाहिए कि बच्चे खुश हो जाएँ। सवेरे सभी को तय करना चाहिए कि, 'भाई, आज किसी से भी आमने-सामने टकराव न हो, ऐसा आप सोच लो' यदि टकराव से कोई फायदा होता है, तो मुझे वह दिखाओ। क्या फायदा होता है?

प्रश्नकर्ता : दुःख होता है।

दादाश्री : इतना ही नहीं कि दुःख होता है, इस टकराव से अभी तो दुःख हुआ ही, मगर पूरा दिन बिगड़ जाता है और अगले जन्म में फिर मनुष्यपन ही चला जाता है। मनुष्यपन तो कब रहेगा? जब सज्जनता होगी तभी मनुष्यपन रहेगा लेकिन अगर पाशवता हो, बार-बार किसी को परेशान करे, सींग मारता रहे, तब फिर क्या वहाँ पर फिर से मनुष्यपन आएगा?! गायें-भैंसें सींग मारती हैं, या मनुष्य मारते हैं?

प्रश्नकर्ता : मनुष्य ज़्यादा मारते हैं।

दादाश्री : मनुष्य मारेगा तो फिर उसे जानवर गति में जाना पड़ेगा। अर्थात् वहाँ पर दो के बदले चार पैर और ऊपर से पूँछ मिलेगी! वहाँ क्या ऐसा-वैसा है? वहाँ क्या दुःख नहीं है? बहुत दुःख हैं। ज़रा समझना पड़ेगा। ऐसा कैसे चलेगा?

टकराव, अपनी अज्ञानता ही है!

प्रश्नकर्ता : स्वभाव नहीं मिलते, इसीलिए जीवन में टकराव होता है न?

दादाश्री : टकराव होना, उसी को संसार कहते हैं!

प्रश्नकर्ता : टकराव होने का कारण क्या है?

दादाश्री : अज्ञानता। जब तक किसी के भी साथ मतभेद होता है, तो वह आपकी निर्बलता की निशानी है। लोग गलत नहीं हैं, मतभेद में गलती आपकी है। लोगों की गलती है ही नहीं। वह अगर जान-बूझकर भी करे, तो भी वहाँ पर हमें क्षमा माँग लेनी चाहिए कि, ''भाई, यह मेरी समझ में नहीं आता है।'' बाकि, लोग गलती करते ही नहीं हैं। लोग ऐसे हैं ही नहीं कि मतभेद होने दें। जहाँ टकराव हुआ, वहाँ अपनी ही भूल है।

प्रश्नकर्ता : खंभा बीच में हो और टकराव टालना हो, तब हम एक तरफ होकर खिसक जाएँ, लेकिन अगर खंभा खुद आकर हम पर गिर जाए, तब वहाँ हम क्या करें?

दादाश्री : गिरे, तो खिसक जाना।

प्रश्नकर्ता : कितना भी खिसकने जाएँ फिर भी खंभा हमें लगे बिना रहता नहीं। उदाहरण के तौर पर, अपनी पत्नी टकरा जाती है।

दादाश्री : यह खोज निकालो कि जब वह टकराए, उस घड़ी आपको क्या करना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : सामने वाला व्यक्ति अपना अपमान करे और हमें अपमान लगे, तो क्या उसका कारण अपना अहंकार है?

दादाश्री : वास्तव में तो जब सामने वाला अपमान करता है, तब वह हमारे अहंकार को पिघला देता है और वह भी 'ड्रामेटिक' अहंकार को, जितना एक्सेस अहंकार है, वही पिघलता है। उसमें हमारा क्या बिगड़ जाएगा? ये कर्म छूटने नहीं देते। छोटा बच्चा भी सामने हो, तब भी हमें तो कहना चाहिए कि, 'अब हमें छुड़वा दे।'

समा लो सब, सागर की तरह पेट में!

प्रश्नकर्ता : दादा, व्यवहार में व्यू पोइन्ट के टकराव में, बड़ा छोटे की भूल निकालता है, छोटा अपने से छोटे की भूल निकालता है। ऐसा क्यों?

दादाश्री : वह तो ऐसा है कि बड़ा छोटे को खा जाता है। बड़ा छोटे की भूल निकालता है, उसके बजाय आप कहो कि मेरी ही भूल है। भूल को स्वीकार कर लोगे, तो उसका हल निकलेगा। 'हम' क्या करते हैं कि दूसरा यदि सहन न कर सके तो 'हम' अपने ऊपर ही ले लेते हैं, दूसरे की गलतियाँ नहीं निकालते। दूसरों को क्यों दोष दें? अपने पास तो सागर जैसा पेट है! देखो न, बम्बई की सभी गटरों का पानी सागर खुद में समा लेता है न? उसी तरह आप भी पी (समा) लो। इससे क्या होगा कि, इन बच्चों पर और सभी लोगों पर प्रभाव पड़ेगा। वे भी सीखेंगे। बच्चे भी समझ जाएँगे कि 'इनका पेट सागर जैसा है!' जितना आए, उतना जमा कर लो। व्यवहार में ऐसा नियम है कि अपमान करने वाला खुद अपनी शक्ति हमें देकर जाता है। इसलिए हँसते-हँसते अपमान ले लेना है!

'न्याय-स्वरूप', वहाँ तप ही उपाय!

प्रश्नकर्ता : टकराव टालने की, 'समभाव से *निकाल* (निपटारा) ' करने की अपनी वृत्ति हो, फिर भी सामने वाला व्यक्ति हमें परेशान करे, अपमान करे, तब हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : कुछ नहीं। वह आपका हिसाब है। इसलिए उसका 'समभाव से *निकाल*' करना है, आपको ऐसा तय करना चाहिए। आप अपने निश्चय में ही रहना और आप अपने अनुसार अपनी पज़ल सॉल्व करते रहना!

प्रश्नकर्ता : यह जो टकराव होता है, वह 'व्यवस्थित' के आधार पर ही होता है न?

दादाश्री : हाँ, जो टकराव है, वह 'व्यवस्थित' के आधार पर है, मगर ऐसा कब कह सकते हैं? टकराव हो जाने के बाद। 'हमें टकराव नहीं करना है' ऐसा आपका निश्चय होना चाहिए। सामने खंभा दिखे, तब आप समझ लो कि 'खंभा है, घूमकर जाना होगा, टकराना तो है ही नहीं।' लेकिन फिर भी यदि टकराव हो जाए, तब आप कहना कि 'व्यवस्थित' है। पहले से ही ऐसा मानकर चलोगे कि 'व्यवस्थित' है, तब तो 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग कहलाएगा।

घर्षण से हनन, शक्तियों का

सारी आत्मशक्ति यदि खत्म होती है, तो वह है घर्षण की वजह से। ज़रा सा भी टकराए तो खत्म। सामने वाला टकराए, तब हमें संयमपूर्वक रहना चाहिए। टकराव तो होना ही नहीं चाहिए। फिर चाहे इस शरीर को जाना हो तो जाए (कैसी भी विकट परिस्थिति आए), लेकिन टकराव में नहीं आना चाहिए। अगर घर्षण ही न हो तो मनुष्य मोक्ष में चला जाए। किसी ने इतना ही सीख लिया कि 'मुझे घर्षण

में नहीं पड़ना है', तो फिर उसे गुरु की या किसी की भी ज़रूरत नहीं है। एक या दो जन्मों में सीधे मोक्ष चला जाएगा। 'घर्षण में आना ही नहीं है' ऐसा यदि उसकी श्रद्धा में आ गया और निश्चय ही कर लिया, तो तभी से समकित हो गया! अर्थात् यदि किसी को समकित प्राप्त करना हो तो हम गारन्टी देते हैं कि जाओ, घर्षण नहीं करने का निश्चय कर लो, तभी से समकित हो जाएगा। देह का टकराव हो जाए और चोट लग जाए तो इलाज करने से ठीक हो जाएगा लेकिन घर्षण और संघर्षण से मन में जो दाग़ पड़ जाएँ, बुद्धि पर दाग़ पड़ जाए, तो उन्हें कौन निकालेगा? हजारों जन्मों तक भी नहीं जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : घर्षण और संघर्षण से मन और बुद्धि पर घाव हो जाते हैं?

दादाश्री : अरे! मन-बुद्धि पर तो क्या, पूरे अंतःकरण पर घाव होते जाते हैं और उसका असर शरीर पर भी होता है। घर्षण से तो कितनी मुश्किलें हैं।

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं कि घर्षण से सारी शक्तियाँ खत्म हो जाती हैं, तो क्या जागृति से शक्तियाँ वापस आ जाएँगी?

दादाश्री : शक्तियों को खींचने की ज़रूरत नहीं है। शक्तियाँ तो हैं ही। शक्तियाँ अब उत्पन्न हो रही हैं। पहले जो घर्षण हो चुके थे और उससे जो नुकसान हुआ था, वही वापस आ रहा है। लेकिन अब यदि नया घर्षण पैदा करोगे, तो फिर शक्तियाँ चली जाएँगी। आई हुई शक्ति भी चली जाएगी और यदि खुद घर्षण होने ही न दे, तो शक्ति उत्पन्न होती रहेगी!

इस दुनिया में बैर से घर्षण होता है। संसार का मुख्य बीज बैर है। जिसके बैर और घर्षण - ये दो बंद हो गए, उसका मोक्ष हो गया। प्रेम बाधक नहीं है, बैर जाए तो प्रेम उत्पन्न होता है।

कॉमनसेन्स, एवरीव्हेर एप्लिकेबल!

व्यवहार शुद्ध करने के लिए क्या होना चाहिए? 'कॉमनसेन्स' कम्पलीट (पूर्ण) होनी चाहिए। स्थिरता-गंभीरता होनी चाहिए। व्यवहार में 'कॉमनसेन्स' की ज़रूरत है। 'कॉमनसेन्स' अर्थात् 'एवरीव्हेर एप्लिकेबल' (हर जगह काम आए)। स्वरूपज्ञान के साथ 'कॉमनसेन्स' हो तो बहुत देदीप्यमान होता है।

प्रश्नकर्ता : 'कॉमनसेन्स' कैसे प्रकट होता है?

दादाश्री : 'यदि इस तरह रहें कि भले ही कोई हमसे टकराए पर हम किसी से नहीं टकराएँगे' तो 'कॉमनसेन्स' उत्पन्न होगा। लेकिन हमें किसी से नहीं टकराना चाहिए, वर्ना 'कॉमनसेन्स' चला जाएगा! अपनी ओर से घर्षण नहीं होना चाहिए।

सामने वाले के घर्षण से अपने में 'कॉमनसेन्स' उत्पन्न होता है। आत्मा की यह शक्ति ऐसी है कि घर्षण के समय कैसे बर्ताव करना, उसके सारे उपाय बता देती है और एक बार दिखा दे, तो फिर वह ज्ञान जाएगा नहीं। ऐसा करते-करते 'कॉमनसेन्स' बढ़ता जाता है। मेरा किसी से घर्षण नहीं होता, क्योंकि मेरा 'कॉमनसेन्स' ज़बरदस्त है इसलिए आप जो कहना चाहते हैं, वह तुरंत ही मेरी समझ में आ जाता है। लोगों को ऐसा लगता है कि यह दादा का अहित कर रहा है, लेकिन मुझे तुरंत समझ में आ जाता है कि यह अहित, अहित नहीं है। सांसारिक अहित नहीं है और धार्मिक अहित भी नहीं है और आत्मा के संबंध में तो अहित है ही नहीं। लोगों को ऐसा लगता है कि आत्मा का अहित कर रहे हैं, लेकिन हमें उसमें हित समझ में आता है। इतना है 'कॉमनसेन्स' का प्रभाव! इसीलिए हमने 'कॉमनसेन्स' का अर्थ लिखा है कि 'एवरीव्हेर एप्लिकेबल'। आज की जनरेशन में 'कॉमनसेन्स' जैसी चीज़ ही नहीं है। जनरेशन टू जनरेशन 'कॉमनसेन्स' कम होता गया है।

अपना (आत्म) विज्ञान प्राप्त हो जाए उसके बाद लोग इस प्रकार से रह सकते हैं। या फिर आम जनता में कोई एकाध व्यक्ति इस प्रकार रह सकता है। ऐसे पुण्यशाली लोग भी होते हैं! लेकिन वे तो कुछ जगहों पर ही रह सकते हैं, हर बाबत में नहीं रह सकते।

प्रश्नकर्ता : सभी प्रकार के घर्षण का कारण यही है न कि एक लेयर से दूसरी लेयर के बीच का अंतर बहुत ज़्यादा है?

दादाश्री : घर्षण तो प्रगति है! जितनी झंझट होगी, घर्षण होगा, उतना ही ऊपर उठने का मार्ग मिलेगा। घर्षण नहीं होगा तो वहीं के वहीं रहोगे। इसलिए लोग घर्षण खोजते हैं।

घर्षण से प्रगति के पथ पर!

प्रश्नकर्ता : कोई ऐसा समझकर खोजे कि घर्षण प्रगति के लिए है, तो क्या प्रगति होगी?

दादाश्री : लेकिन वे ऐसा समझकर नहीं खोजते। भगवान ऊपर नहीं उठा रहे हैं, घर्षण ऊपर उठाता है। घर्षण कुछ हद तक ऊपर उठा सकता है, उसके बाद तो जब ज्ञानी मिलेंगे तभी काम होगा। घर्षण तो कुदरती तरीके से होता है, जैसे नदी में आपस में टकराकर पत्थर गोल हो जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : घर्षण और संघर्षण में क्या फर्क है?

दादाश्री : जब निर्जीव चीज़ें टकराती हैं, तब वह घर्षण कहलाता है और जीव टकराते हैं, तब संघर्षण होता है।

प्रश्नकर्ता : संघर्ष से आत्मशक्ति आवृत्त हो जाती है न?

दादाश्री : हाँ, सही बात है। संघर्ष हो तो उसमें हर्ज नहीं है लेकिन 'हमें संघर्ष करना है', ऐसा भाव निकाल देने को मैं कहता हूँ।

'आपमें' संघर्ष करने का भाव नहीं होना चाहिए, फिर चंदूलाल (यहाँ खुद का नाम समझें) भले ही संघर्ष करे। लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए कि अपना भाव आवृत्त हो जाए।

घर्षण कराए, प्रकृति!

प्रश्नकर्ता : घर्षण कौन करवाता है? जड़ या चेतन?

दादाश्री : पिछले घर्षण ही फिर से घर्षण करवाते हैं। जड़ या चेतन का इसमें सवाल ही नहीं है। आत्मा इसमें दखल करता ही नहीं। यह सारा घर्षण *पुद्गल* ही करवाता है। लेकिन जो पिछले घर्षण हैं, वे फिर से घर्षण करवाते हैं। जिसके पिछले घर्षण पूरे हो चुके हैं, उससे फिर घर्षण नहीं होते। वर्ना घर्षण पर घर्षण और उसके ऊपर घर्षण, ऐसे बढ़ता ही जाता है।

पुद्गल का अर्थ क्या है कि वह पूरी तरह से जड़ नहीं है, वह मिश्र चेतन है। यह विभाविक *पुद्गल* कहलाता है, विभाविक यानी विशेष भाव से परिणाम प्राप्त *पुद्गल,* वही सब करवाता है। जो शुद्ध *पुद्गल* है, वह *पुद्गल* ऐसा नहीं करवाता। यह *पुद्गल* तो मिश्र चेतन हो गया है। आत्मा का विशेष भाव और जड़ का विशेष भाव, दोनों मिलकर तीसरा रूप बना, प्रकृति स्वरूप बना। वही सारा घर्षण करवाता है।

प्रश्नकर्ता : घर्षण न हो तो उसी को ऐसा माना जाता है कि सच्चा अहिंसक भाव पैदा हुआ?

दादाश्री : नहीं, ऐसा कुछ नहीं है! लेकिन दादाजी से यह जाना कि इस दीवार से घर्षण करने से इतना फायदा(!) है, तो भगवान के साथ घर्षण करने में कितना फायदा होगा?! इतना जोखिम समझने से ही अपना परिवर्तन होता रहेगा।

अहिंसा को तो पूर्ण रूप से नहीं समझा जा सकता। और पूर्ण रूप में समझना बहुत कठिन है। इसके बजाय अगर ऐसा पकड़ लिया जाए कि 'कभी भी घर्षण में नहीं आना है', तब फिर क्या होगा कि शक्तियाँ बची रहेंगी और दिनोंदिन बढ़ती ही रहेंगी। फिर घर्षण से होने वाला नुकसान नहीं होगा। अगर कभी घर्षण हो जाए तो घर्षण के बाद आपके प्रतिक्रमण करने पर वह साफ हो जाएगा। इसलिए यह समझना चाहिए कि यहाँ पर घर्षण हो जाता है, तो वहाँ प्रतिक्रमण करना चाहिए। वर्ना बहुत जोखिमदारी है। इस ज्ञान से मोक्ष में तो जाओगे, लेकिन घर्षण के कारण मोक्ष में जाते हुए बहुत बाधाएँ आएँगी और देर लगेगी!

अगर इस दीवार के लिए उल्टे विचार आ जाएँ तो हर्ज नहीं है, क्योंकि एकपक्षीय नुकसान है। जबकि किसी जीवित व्यक्ति को लेकर एक भी उल्टा विचार आया तो जोखिम है। दोनों तरफ से नुकसान होगा। लेकिन अगर हम उसका प्रतिक्रमण करेंगे तो सारे दोष चले जाएँगे। इसलिए जहाँ-जहाँ घर्षण होते हैं, वहाँ पर प्रतिक्रमण करो, तो घर्षण खत्म हो जाएँगे।

समाधान, सम्यक् ज्ञान से ही!

प्रश्नकर्ता : दादाजी, यह अहंकार की बात कई बार घर में भी लागू होती है, संस्था में लागू होती है। दादाजी का काम कर रहे हों तब उसमें भी बीच में कहीं अहंकार टकरा जाते हैं, वहाँ भी लागू होती है। वहाँ पर भी समाधान चाहिए न?

दादाश्री : हाँ, समाधान चाहिए न! अपने यहाँ 'ज्ञान वाला' समाधान लेता है, लेकिन जहाँ 'ज्ञान' नहीं है वहाँ क्या समाधान लेगा? वहाँ फिर अलग होता जाएगा, मन उससे अलग होता जाएगा। अपने यहाँ अलग नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी, टकराना नहीं चाहिए न?

दादाश्री : टकरा जाना तो स्वभाव है। ऐसा 'माल' भरकर लाया है, इसलिए ऐसा हो जाता है। यदि ऐसा माल नहीं लाया होता तो ऐसा नहीं होता, अतः हमें समझ लेना चाहिए कि 'भाई की आदत ही ऐसी है'। अगर हम ऐसा समझ जाएँगे तो फिर हम पर असर नहीं होगा। क्योंकि आदत आदत वाले की (पूर्वसंचित संस्कार वाले जीव की) और 'हम' अपने वाले (शुद्धात्मा)! और फिर उसका *निकाल* हो जाता है। आप रुके रहोगे तो झंझट है। बाकी टकराव तो होता ही है। ऐसा तो है ही नहीं कि टकराव नहीं हो। लेकिन केवल यही देखना है कि उस टकराव की वजह से हम एक दूसरे से अलग नहीं हो जाएँ। वैसा तो पति-पत्नी में भी होता है लेकिन वे फिर वापस एक ही रहते हैं न! वैसा तो होता है। इसमें किसी पर कोई दबाव नहीं डाला है कि, 'तुम मत टकराना।'

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी ऐसा भाव तो निरंतर रहना चाहिए न कि टकराव नहीं हो?

दादाश्री : हाँ, रहना चाहिए। यही करना है न! उसके लिए प्रतिक्रमण करना है और उसके प्रति भाव रखना है! फिर से ऐसा हो जाए तो फिर से प्रतिक्रमण करना। क्योंकि एक परत चली जाएगी, फिर दूसरी परत चली जाएगी। ऐसा परत वाला है न? मेरा तो जब टकराव होता था, तब नोट करता था कि आज अच्छा ज्ञान मिला! टकराने से फिसल नहीं जाते, जागृत-जागृत ही रहते हैं न! वह आत्मा का विटामिन है। अर्थात् इस टकराव में झंझट नहीं है। टकराने के बाद एक दूसरे से अलगाव नहीं हो तो वही पुरुषार्थ है। यदि सामने वाले से हमारा मन अलग होने लगे तो प्रतिक्रमण करके राह पर ले आना। हम इन सभी के साथ किस प्रकार तालमेल रखते होंगे? आपके

साथ भी तालमेल बैठता है या नहीं बैठता? ऐसा है कि शब्दों से टकराव पैदा होता है। मुझे बोलना बहुत पड़ता है, फिर भी टकराव नहीं होता न!

टकराव तो होता है। ये बरतन टकराते हैं या नहीं टकराते? *पुद्गल* का स्वभाव है टकराना। लेकिन ऐसा 'माल' भरा होगा, तो। नहीं भरा होगा तो नहीं। हमारे भी टकराव होते थे लेकिन ज्ञान होने के बाद टकराव नहीं हुए। क्योंकि हमारा ज्ञान अनुभव ज्ञान है और हम इस ज्ञान से सारा *निकाल* करके आए हैं और आपको *निकाल* करना बाकी है।

दोष धुलते हैं प्रतिक्रमण से!

किसी से टकराव में आने पर वापस दोष दिखाई देने लगते हैं और टकराव न हो तो दोष ढके रहते हैं। रोज़ के पाँच सौ-पाँच सौ दोष दिखने लगें तो समझना कि पूर्णाहुति नज़दीक आ रही है।

इसलिए जहाँ हो वहाँ से टकराव टालना। ऐसे टकराव करके इस लोक का तो बिगाड़ते ही हैं, लेकिन परलोक का भी बिगाड़ते हैं! जो इस लोक का बिगाड़ते हैं, वे परलोक का बिगाड़े बगैर रहते ही नहीं! जिसका यह लोक सुधरेगा, उसका परलोक भी सुधर जाएगा। इस जन्म में यदि किसी तरह की अड़चन नहीं आई हो तो समझना कि परभव में भी अड़चन है ही नहीं। और यहाँ पर अड़चनें खड़ी कीं, तो वे सभी वहाँ पर भी आएँगी ही।

तीन जन्मों की गारन्टी!

जिसका टकराव नहीं होगा, उसका तीन जन्मों में मोक्ष हो जाएगा। इस बात की मैं गारन्टी देता हूँ। टकराव हो जाए, तो प्रतिक्रमण

कर लेना। टकराव *पुद्गल* का है और *पुद्गल* से *पुद्गल* के टकराव का नाश प्रतिक्रमण से होता है।

सामने वाला 'भाग' लगाए तो हमें 'गुणा' करना चाहिए, ताकि रकम उड़ जाए। सामने वाले व्यक्ति के बारे में यह सोचना ही गुनाह है कि, 'उसने मुझे ऐसा कहा, वैसा कहा'। यही गुनाह है। यहाँ रास्ते में जाते समय पेड़ से टकरा गए तो उससे क्यों नहीं लड़ते? पेड़ को जड़ कैसे कह सकते हैं? जो टकराते हैं, वे सभी पेड़ ही हैं। जब गाय का पैर हम पर पड़े, तब क्या हम कुछ कहते हैं? ऐसा ही इन सब लोगों का है। 'ज्ञानी पुरुष' सभी को कैसे क्षमा कर देते हैं? वे समझते हैं कि ये बेचारे समझते नहीं हैं, पेड़ जैसे हैं। और समझदार को तो कहना ही नहीं पड़ता। वह तो भीतर ही भीतर तुरंत प्रतिक्रमण कर लेता है।

जहाँ आसक्ति, वहाँ रिएक्शन ही!

प्रश्नकर्ता : लेकिन कई बार हमें द्वेष नहीं करना हो, फिर भी द्वेष हो जाता है, उसका क्या कारण है?

दादाश्री : किसके साथ?

प्रश्नकर्ता : पति के साथ ऐसा हो जाए तो?

दादाश्री : वह द्वेष नहीं कहलाता। जो आसक्ति का प्रेम है, वह सदैव रिएक्शनरी (प्रतिक्रियात्मक) होता है। इसलिए यदि एक चिढ़ जाए तो फिर ये वापस उल्टे चलते हैं। उल्टे चले इसलिए कुछ समय तक दूर रहते हैं इसलिए फिर प्रेम का उफान आता है और फिर से जब प्रेम बढ़ता है तो टकराव होता है। उससे फिर वापस प्रेम बढ़ता है। जहाँ अत्यधिक प्रेम होता है, वहाँ दखल होती हैं। अर्थात् जहाँ भी दखल होती रहती हैं, वहाँ अंदर ही अंदर उन लोगों को प्रेम है। प्रेम होता है तभी दखल होती है। पूर्वजन्म का प्रेम हो, तभी दखल होती

है। ज़रूरत से ज़्यादा प्रेम है, वर्ना दखल होती ही नहीं! इस दखल का स्वरूप ही ऐसा है।

उसे लोग क्या कहते हैं? 'टकराव की वजह से ही हमारा प्रेम है।' तो बात सही भी है। वह आसक्ति टकराव की वजह से ही हुई है। जहाँ टकराव कम होता है, वहाँ आसक्ति नहीं होती। ऐसा समझ लेना कि जिस घर में स्त्री-पुरुष के बीच टकराव कम है, वहाँ आसक्ति कम है। समझ में आए ऐसी बात है न?

प्रश्नकर्ता : संसार व्यवहार में अगर कभी अहम् रहता है, तो उसकी वजह से चिंगारियाँ बहुत निकलती हैं।

दादाश्री : वे अहम् की चिंगारियाँ नहीं निकलती हैं। वे दिखती तो हैं अहम् की चिंगारियाँ, लेकिन वह 'विषय' (विकार) के अधीन रहकर होता है। विषय नहीं होगा, तो यह भी नहीं रहेगा। विषय बंद हो जाएगा तो उसके बाद वह सारा इतिहास ही बंद हो जाएगा। इसलिए अगर कोई साल भर के लिए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें तो उसके बाद जब उनसे मैं पूछता हूँ तब वे कहते हैं, 'जीवन में ज़रा सी भी तकरार नहीं, किच-किच नहीं, खिट-पिट नहीं, कुछ भी नहीं, स्टेन्ड स्टिल (सबकुछ शांत)!' फिर मैं पूछता हूँ। मैं जानता हूँ कि ऐसा तो होता है। यानी यह विषय के कारण होता है।

प्रश्नकर्ता : पहले तो हम ऐसा समझते थे कि घर के कामकाज की वजह से टकराव होता है। लेकिन घर के काम में हेल्प करने के बावजूद भी टकराव होता है।

दादाश्री : वे सब टकराव होंगे ही। जब तक यह विकारी मामला है, संबंध हैं, तब तक टकराव होंगे ही। यही टकराव की जड़ है। जिसने विषय को जीत लिया, उसे कोई नहीं हरा सकता। कोई उसका नाम भी नहीं ले सकता। उसका प्रभाव पड़ता है।

टकराव, स्थूल से लेकर सूक्ष्मतम तक का!

प्रश्नकर्ता : अपना वाक्य है कि 'टकराव टालो।' 'इस वाक्य की आराधना करता जाए तो यह अंत तक मोक्ष में पहुँचा देगा। उसमें स्थूल टकराव टालना, फिर धीरे-धीरे, बढ़ते-बढ़ते सूक्ष्म टकराव, सूक्ष्मतर टकराव टालो', यह कैसे? वह समझाएँ।

दादाश्री : उसे सूझ पड़ती ही जाती है। जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता है न तो किसी को उसे सिखाना नहीं पड़ता। अपने आप ही आ जाता है। यह शब्द ही ऐसा है कि अंत तक मोक्ष में ले जाता है।

दूसरा सूत्र - 'भुगते उसी की भूल', यह भी मोक्ष में ले जाएगा। ये एक-एक शब्द मोक्ष में ले जाएँगे। इसकी हमारी गारन्टी है।

प्रश्नकर्ता : वह साँप के, खंभे के उदाहरण दिए वह तो स्थूल टकराव के उदाहरण हैं। फिर सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम के उदाहरण दीजिए। सूक्ष्म टकराव कैसे होता है?

दादाश्री : तेरा फादर के साथ जो होता है, वह सब सूक्ष्म टकराव है।

प्रश्नकर्ता : सूक्ष्म यानी मानसिक? वाणी से होता है, वह भी सूक्ष्म में जाएगा?

दादाश्री : वह स्थूल में। जो सामने वाले को पता नहीं चले, जो दिखे नहीं, वे सब सूक्ष्म में आते हैं।

प्रश्नकर्ता : उस सूक्ष्म टकराव को कैसे टालें?

दादाश्री : पहले स्थूल, फिर सूक्ष्म, बाद में सूक्ष्मतर और अंत में सूक्ष्मतम टकराव टालने हैं।

प्रश्नकर्ता : सूक्ष्मतर टकराव किसे कहते हैं?

दादाश्री : तुम किसी को मारते हो और वह व्यक्ति ज्ञान से देखे कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ, यह 'व्यवस्थित शक्ति' मार रही है', इस प्रकार देखे, लेकिन मन से ज़रा दोष देख ले तो वह सूक्ष्मतर टकराव है।

प्रश्नकर्ता : फिर से कहिए, ठीक से समझ में नहीं आया।

दादाश्री : यह तुम सभी लोगों के दोष देखते हो न! वह सूक्ष्मतर टकराव है।

प्रश्नकर्ता : यानी दूसरों के दोष देखना, वह सूक्ष्मतर टकराव है?

दादाश्री : ऐसा नहीं, खुद ने तय किया हो कि दूसरों के दोष हैं ही नहीं और फिर भी दोष दिखें तो वह सूक्ष्मतर टकराव है। क्योंकि वह शुद्धात्मा है और दोष अलग हैं।

प्रश्नकर्ता : तो उसे ही मानसिक टकराव कहा है?

दादाश्री : वह मानसिक तो पूरा ही सूक्ष्म में गया।

प्रश्नकर्ता : तो इन दोनों के बीच फर्क कहाँ है?

दादाश्री : यह तो मन से भी ऊपर की बात है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह सूक्ष्मतर टकराव है, उस समय साथ में सूक्ष्म टकराव भी रहता है न?

दादाश्री : वह हमें नहीं देखना! सूक्ष्म अलग होता है और सूक्ष्मतर अलग होता है। सूक्ष्मतम तो आखिरी बात है।

प्रश्नकर्ता : एक बार सत्संग में ऐसी ही बात हुई थी कि चंदूलाल के साथ तन्मयाकार होना सूक्ष्मतम टकराव कहलाता है।

दादाश्री : हाँ, सूक्ष्मतम टकराव! उसे टालना। भूल से तन्मयाकार हो जाए तब, फिर बाद में पता चलता है न कि, यह भूल हो गई।

प्रश्नकर्ता : तब उस टकराव को टालने का उपाय केवल प्रतिक्रमण ही है या कुछ और भी है?

दादाश्री : दूसरा कोई हथियार है ही नहीं। ये हमारी नौ कलमें, वे भी प्रतिक्रमण ही हैं। अन्य कोई हथियार नहीं है। इस दुनिया में प्रतिक्रमण के सिवा और कोई साधन नहीं है। वह उच्चतम साधन है। क्योंकि संसार अतिक्रमण से खड़ा हो गया है।

प्रश्नकर्ता : यह तो कितना विस्मयकारक है! 'हुआ सो न्याय', 'भुगते उसी की भूल', ये जो वाक्य हैं, वे एक-एक वाक्य अद्भुत हैं। और दादाजी की साक्षी में प्रतिक्रमण करते हैं न, तो उनके स्पंदन पहुँचते ही हैं।

दादाश्री : हाँ, सही है। स्पंदन तुरंत ही पहुँच जाते हैं और फिर उसके परिणाम आते हैं। हमें भरोसा हो जाता है कि यह असर हुआ लगता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी, प्रतिक्रमण तो इतनी तेज़ी से हो जाते हैं, उसी क्षण! यह तो ग़ज़ब है, दादाजी! यह दादाजी की कृपा ग़ज़ब की है!

दादाश्री : हाँ, यह ग़ज़ब है। साइन्टिफिक चीज़ है।

– **जय सच्चिदानंद**

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दु:खों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंत:करण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार (सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 12 (पू)
53. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
55. आप्तवाणी - 14 (भाग-1 से 3)
57. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज (मुख्य केन्द्र) : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (**E**)
फोन : 9323528901

दिल्ली	9810098564	**बेंगलूर**	9590979099
कोलकता	9830093230	**हैदराबाद**	9885058771
चेन्नई	7200740000	**पूणे**	7218473468
जयपुर	8890357990	**जलंधर**	9814063043
भोपाल	6354602399	**चंडीगढ़**	9780732237
इन्दौर	6354602400	**कानपुर**	9452525981
रायपुर	9329644433	**सांगली**	9423870798
पटना	7352723132	**भुवनेश्वर**	8763073111
अमरावती	9422915064	**वाराणसी**	9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 795-92-DADA (3232)

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 402179706

New Zealand : +64 21 0376434

Singapore : +65 91457800

www.dadabhagwan.org

टकराव टालिए

जिस तरह हम रास्ते पर सँभलकर चलते हैं न! फिर सामने वाला आदमी भले ही कितना भी बुरा हो और हमें टक्कर लगा दें और नुकसान पहुँचाए, वह अलग बात है, लेकिन अपना इरादा नुकसान पहुँचाने का नहीं होना चाहिए। हम उसे नुकसान पहुँचाने जाएँ तो इसमें हमें ही नुकसान होने वाला है। इसलिए किसी भी टकराव में हमेशा दोनों को ही नुकसान होता है। आप सामने वाले को दुःख पहुँचाओ तो उसके साथ ही, उसी क्षण आपको भी दुःख पहुँचे बगैर रहेगा ही नहीं। यह टकराव है।

इसलिए मैंने यह उदाहरण दिया है कि मार्ग पर ट्रैफिक धर्म क्या है कि टकराओगे तो आप मर जाओगे, टकराने में जोखिम है। इसलिए किसी के साथ टकराना मत। इसी प्रकार व्यवहारिक कार्यों में भी मत टकराना। टकराव टालिए।

-दादाश्री

dadabhagwan.org

ISBN 978-93-86289-72-8

Printed in India

Price ₹20